अभयसोमसुन्दरकृत विक्रम चौबोली चउपि

□ डॉ० मदनराज डी० मेहता

हिन्दी विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर

विक्रमादित्य के प्रेरक चरित्र ने साहित्यकारों के मानस को सर्वाधिक स्पर्श किया। करुणा, न्याय, औदार्य एवं शौर्य की अनेक अनुश्रुतियों और लोककथाओं के नायक विक्रमादित्य प्रत्येक भारतीय के लिये गौरवास्पद हैं। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश अथवा अन्य भारतीय भाषाओं में ही नहीं, अरबी, फारसी तथा चीनी जैसी विदेशी भाषाओं में भी विक्रमादित्य विषयक अनेक कृतियों के प्रणयन की शोध-सूचनाओं से पुष्टि होती है। इतिहास अथवा प्रामाणिकता की दृष्टि से, हो सकता है, इन रचनाओं के महत्त्व में विद्वान शंका करे, लेकिन यह बात निश्चित रूप से सिद्ध होती है कि विक्रम के प्रभावशाली वृत्त में सामाजिक एवं सांस्कृतिक असमानताओं में सामंजस्य स्थापित करने की आश्चर्यजनक क्षमता है। न्यूनाधिक इसी कारण से मत-मतान्तर, देश और काल की सीमाओं का अतिक्रमण कर रचयिताओं ने विक्रमादित्य को अपने हृदय का हार मानकर भिन्न-भिन्न भाषाओं में उनके अप्रतिम, उदात्त एवं आकर्षक गुणों का मुक्त-कण्ठ से गुणगान किया।

प्रसिद्ध गुर्जर कवि वृत्त संग्राहक श्री मोहनलाल दलीचन्द देसाई तथा विख्यात साहित्यान्वेषक श्री अगरचन्द नाहटा ने जैन रचयिताओं द्वारा लिखित ५५ ग्रंथों का परिचय अनेक वर्षों में पूर्व सूचित किया था। श्री देसाई ने तो उपलब्ध ग्रन्थों के आदि, मध्य एवं अन्त के उद्धरण भी दिये थे। नाहटाजी ने तो केवल ग्रन्थ नाम, ग्रन्थ रचयिता, रचनाकाल, प्राप्ति स्थान एवं प्रकाशन स्थान का निर्देश कर ही संतोष किया था।

प्राचीन पाण्डुलिपियों के मेरे निजी संग्रह से मुझे एक गुटका प्राप्त हुआ है, जो विक्रम संवत् १७५७ से १७७९ के मध्य में लिपिबद्ध किया गया था। इस गुटके में अन्य अनेक ग्रन्थों के साथ विक्रमादित्य सम्बन्धी एक ग्रन्थ है, 'विक्रम चौबोली चउपि'। ५४×४० से० मी० आकार के सांगानेरी कागज पर निबद्ध ग्रन्थ का पाठ सुवाच्य तो है ही, शुद्ध भी है। इस श्री विक्रम चौबोली चउपि की रचना वाचनाचार्य अभयसोमसुन्दर ने विक्रम संवत् १७२४ की आषाढ़ कृष्णा १० को की थी। उन्होंने ग्रन्थ के अन्त में रचनाकाल का स्पष्ट उल्लेख किया है—

सतर चउविसैं किसन दसवीं आदि आसाढ़ै सहि।
वाचनाचारिअ अभसोमे मति सुन्दर काजै कहि॥

प्रारम्भ में अभयसोम ने सरस्वती को स्मरण करते हुए विक्रम-वृत्त की रचना के लिए शुभाशीष की याचना की है। अत्यन्त स्वाभाविक ढंग से कवि कहता है :—

वीणा पुस्तक धारिणी हंसासन कवि माय।
ग्रह ऊगम ते नित नमूं, सारद तोरा पाय॥
दुई पंचासे बंदिउ, कोइ नवो कोठार।
बाथां भरीने काढ़ता, किणही न लाधो पार॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तोहुंति नवनिधि हुवे, तोहुंति सहु सिद्धि।
आजने आगा लगे, मुरिख पण्डित कीध॥
तिण तोने समरि करी कहिसुं विक्रम बात।
मैं तो उद्यम मांडियो पूरो करस्यो मात॥
मोने किणही न छेतरयो मैं जगी ठग्यो अनेक।
मो कलियुग ने छेतरयो राजा विक्रम एक॥
चौबोली राणी चतुर सीलवंती सुखकार।
विक्रम परणी जिण विधै कथा कहीस निरधार॥

कवि ने मालव प्रदेश और उज्जयिनी नगरी का वर्णन करके विक्रम के ललित चरित्र का हृदयग्राही विवरण प्रस्तुत किया है।

राजा विक्रम वंस पमार।
वंस छत्रीसों ऊपरी सार॥
राज रीत पाले राजान।
न्याये रांम तणे उपमान॥
सकल सोमानी बहुगुण निलो।
सूर वीर उपगारी भलो॥
पृथ्वी उरण किधि तिणे।
परदुखिया दुख भांज्या तिणे॥

एक दिन राजा ने इस बात का पता लगाने के लिए कि लोग उसके बारे में क्या सोचते हैं, श्याम-वेष धारण कर अपने राज्य के कोने-कोने को छान मारा। जब वह थक गया तो एक आम के नीचे विश्राम के लिए रुका। ऊपर एक तोते का जोड़ा मानव-भाषा में अत्यन्त सुन्दर बोली बोल रहे थे। तोते की स्त्री ने नारी की प्रशंसा की तो तोते ने नारी के दुर्गुणों का उल्लेख किया। उसने कहा—

कामणि कूड़ कपट कोथलि,
छांड़ि कुटंब जाई एकली।

[कामिनी असत्य और कपट की थैली होती है, वह कुटम्ब छोड़कर अकेली चली जाती है।]

स्त्री ने प्रत्युत्तर दिया—

नर मत वखाणो सुडि कहे
नेह पषे कूडो निरवहे।
नलराजा दवदंति छांड़ि
गयो सूति मूकि उजाड़ि॥

[नर! मत व्याख्यान करो। नर का स्नेह के प्रति असत्य निर्वाह होता है। नल ने दमयन्ती को छोड़ा और उसे उजाड़ में छोड़ कर चल दिया।]

जब दोनों में वार्तालाप हो रहा था तो राजा ने स्त्री को यह कहते हुए सुना कि यदि पुरुष भले हों तो लीलावती यों ही क्यों रहती है? तोते ने पूछा कि कौन-सी लीलावती? स्त्री ने कहा कि दक्षिण में एक त्रिया राज्य है—कनकपुर। वहाँ लीलावती शासन करती है। वह अप्सरा के सदृश है। वह न तो पुरुष का मुँह देखती है और न पुरुष के महत्त्व को ही मानती है।

विक्रम पूर्वानुराग से पीड़ित होने लगा। उसने उज्जैन पहुँचकर राज्य का कार्य-भार अपने मन्त्री को सौंपा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और स्वयं कनकपुर की ओर चल पड़ा। यात्रा बहुत लम्बी थी। कवि ने मार्ग का वर्णन करते हुए अनेक मार्मिक बातें कही हैं। एक स्थान पर कवि ने कहा—

तिणि देसड़े न जाइये, जिहां अपणो न कोय।
सैरि सैरि हिंडता, बात न पूछे कोय॥

राजा को रास्ते में एक प्रजापति गृहस्थ के यहाँ विश्राम के लिए ठहरना पड़ा। प्रजापति ने विक्रम से यात्रा का उद्देश्य पूछा। राजा ने कहा—लीलावती के रूप की प्रशंसा सुनी है, उसी को देखने जा रहा हूँ। प्रजापति ने कहा—राजन्! उसे तो पुरुष से प्रचण्ड बैर है। वह कृष्ण पक्ष की चतुदर्शी को पास के चामुण्डा के मन्दिर में रात्रि को दर्शनार्थ आती है। वहाँ वह अपनी सखियों के साथ कंचुकी खोलकर नृत्य करती है। यदि वह कंचुकी आपके हाथ लग जाये तो आप लीलावती को प्राप्त कर सकेंगे। राजा विक्रम ने आगे के लिए प्रस्थान किया और अनेक बाधाओं को पार करते हुए चामुण्डा के मन्दिर तक पहुँचे। वहाँ उन्होंने कृष्ण पक्ष की अन्धकारपूर्ण रात्रि में लीलावती को रास करते देखा। उन्होंने चुपके से लोलावती की कंचुकी को उठा लिया। रास समाप्त होने पर लीलावती ने समझा कि उसकी कंचुकी किसी सहेली पास होगी और वह निशंक राजमहल की ओर चली। मार्ग में कंचुकी के सम्बन्ध में जब पूछताछ हुई तो एक सखी ने दूसरी का नाम लिया और दूसरी ने तीसरी का। सभी सहेलियाँ जब कंचुकी का पता नहीं लगा सकीं तो वे चामुण्डा के मन्दिर वापस लौटीं। वहाँ विक्रम के पास कंचुकी होने की सूचना मिली तो सभी सहेलियों ने विनम्रता से कंचुकी लौटाने की प्रार्थना की। विक्रम ने इस शर्त पर कंचुकी देना स्वीकार किया कि वे राजकुमारी से उसका मिलन करायेंगी। सहलियों की सहायता से वह महल में पहुंचा और वैताल की सहायता से चार समस्याएँ कथा के रूप में प्रस्तुत कीं। अन्त में राजकुमारी को बोलना पड़ा और विक्रम लीलावती प्रणय-बंधन में बँध गये।

'विक्रम चौबोली चउपि' राजस्थानी-गुजराती मिश्रित भाषा में निबद्ध एक महत्त्वपूर्ण रचना है। कवि ने अनेक लोकोक्तियों का प्रयोग कर कथा की रोचकता में वृद्धि की है। यहाँ विक्रम चौबोली का आदि मध्य और अन्त रचना के स्वरूप को समझने की दृष्टि से दिया जा रहा है—

॥ ६० ॥ सकल पंडित शिरोमणि पंडित श्री५श्री कांतिविजयगणि गुरुभ्योनमः ॥

आदि भाग

॥ दूहा ॥

वीणा पुस्तक धारिणी, हंसासन कवि माय।
ग्रह ऊगम ते नित नमूँ, सारद तोरा पाय॥ १॥
दुई पंचासे बँदिउ, कोइ नवो कोठार।
बाथां भरी ने काड़तां, किणही न लायो पार॥ २॥
तौ हुंति नव निधि हुवै, तौ हुंति सहु सिद्धि।
आज ने आगा लगै मुरिख पंडित किध॥ ३॥
तिण तो ने समरि करी, कहि सुं विक्रम बात।
मैं तौ उद्यम मांडियो, पूरो करस्यो मात॥ ४॥
मोने किणही न छेतरयो; मैं जगी ठग्यो अनेक।
मो कलियुग ने छेतरयो, राजा विक्रम एक॥ ५॥
चउबोलि रांणी चतुर, सीलवती सुभकार।
विक्रम परणी जिण विधै, कथा कहिस निरधार॥ ६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ चऊपई ढाल ॥

जंबू दिपै भरत विशाल । मालव देसे सदा सुगाल ॥
उजेणि नगरी गुण भरी । गढ मठ मंदिर देउल करी ॥ १ ॥
सात्त भूमि प्रासाद उत्तंग । तोरण मंडप सोहै संग ॥
ठामों ठामैं शत्रुकार । अन्न पानं जिहां दै दै कार ॥ २ ॥
च्यारे करण वसै तिणि पुरै । पवन छत्रीस वसै बहु परै ॥
राजा विक्रम वंस पमार । वंस छत्री सौ उपरी सार ॥ ३ ॥
राअ रीति पाले राजान । न्यायै राम तणैं उपमान ॥
सकल सौभागी बहु गुण निलों । सूरवीर उपगारी भलो ॥ ४ ॥
पृथ्वी उरण किधि तिणे । पर दुखिया दुख भांज्या तिणे ॥
एक दिवसी मन चिंतई राति । जोउ केहवी माहरी बति ॥ ५ ॥
साम वेस पहरियो निज अंग । कांधै खडग ऊछरंग ॥
पोहर राति गइ जै त लई । राइ चाल्यों जोवा ते तलै ॥ ६ ॥
कालि रात ने काला वस्त्र । कालि पाघ ने काला सस्त्र ॥
एणे वेसे राजा फिरें । वीर वीर ना लक्षण धरे ॥ ७ ॥
चउकी चोहट्टें गलि ए गलि । बात करें जब बैठा रलि ॥
लोक वचन सांभली जस भलौ । प्याग त्याग न्याइ गुण निलौ ॥ ८ ॥
जोवे कोतिग बहिर जई । चौर चरड दांणव कुण भई ॥
गुफा विवरें वांडी ठाम । नदि नाल गिर सूनां धाम ॥ ९ ॥
मडे मसाणे विषमा घाट । जोई चाल्यो सुधि वाट ॥
फिरतां षेद थयो राजान । लेईवि सांमो एकणि थान ॥ १० ॥
छांया अंब तणि मनिषंति । फलियो फूल्यो बहू लिभंति ॥
ऊपरि बईठी सुवटा जोड़ि । रंगे बात करें मनकोड़ि ॥ ११ ॥
मांणस भाषा बोलें बोल । अमृत वांणि साकरि तौल ॥
कहे सूडो सांभलि बालही । पुरष रतन सोभा सवि कहि ॥ १२ ॥
सूडी कहे जो बारी कन्हें । तो सोभा सगलि जगि मन्हें ॥
सूडो कहे ईम वषांणै नारि । त्रिबोलि पुरषां आधारि ॥ १३ ॥
कामणि कूड कपट कोथलि । छांडि कुटंब जाई एकली ॥
पुरुष करें विमासी जोई । पुरुष समो नवि पूजे कोई ॥ १४ ॥
नर मत वषांणो सूडि कहें । नेह [पषें कूडो निरवहे ॥
नल राजा दवदंति छांडि । गयो सूति मूकि उजाड़ि ॥ १५ ॥
मांहो मांहे करें इम वाद । सूडी बोलें सरले [साद ॥
पुरष भला जो होवों सही । लीलावई इमही कांइ रही ॥ १६ ॥
कुण लिलावे सूडो कहे । कुण देसे कुण ठांमे रहे ॥
बात कहो तेहनि विगताइ । सुण्यां बिनां किम आवे दाइ ॥ १७ ॥

॥ दूहा ॥

दिषण देसें त्रीय राज छें, कनकपुरि अभिरांम ।
राज करई लीलावति, सारई उत्तम काम ॥ १ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ना रातां नं अपछरा, ना किन्नरी काय।
तिण आगिल तिण सारिषि, जोतां आवें दाय ॥ २ ॥
भाँति एक लीलावति, बीजीऊ भाँति नारि।
पग नें अँगुठे सभी, रूपे कानहि नारि ॥ ३ ॥
नां जोवें मुँह पुरुष तन, ना लेखवे लिगार।
आपण जांण पण थकि, अंगि वहें अहंकार ॥ ४ ॥
एक वाथ सुडि कहि, सुष आमलि मन थंति।
राजा मन देसां भले, एक चितें एकंत ॥ ५ ॥
मन भेद्यो मालव धणि, सांभलि बात विचार।
ते किण विधि देषस्यूँ, चितई मनह मझारि ॥ ६ ॥

मध्य भाग

ढाल—कुमरो बोलाये कुवडो ए देसी ॥ ७ ॥

बोलावें अण बोलति, बाते विक्कम रायो रे।
कथा कहें ने केलवि, आवें कोडि उपायो रे ॥ १ बो० ॥
दीपक सनमुष जोइने, राति घणि किम जाये रे।
कांईक बात कहों तुम्हें, सांभलिए सुष थायो रे ॥ २ बो० ॥
इम जाणे लिलावति, गहिलो ए बर दिसे रे।
ए दिवों कीम बोलसि, मुँह चढ़ावे रिसौ रे ॥ ३ बो० ॥
दीवा मांहि देवता, आगियों बोलें आगे रे।
सांभलि राय सुजांण तुं, बात कहूँ किण रागें रे ॥ ४ बो० ॥
बात कीसि हुषियां कही, एक घडि सुष नांहि रे।
मोडि मरोडि वाट ने, तेल भरि तप मांहि रे ॥ ५ बो० ॥
इम काया परजाकतों, राति दिवस सहां दुषो रे।
बात न काइ आवडे, दुषां उपरि दुषों रे ॥ ६ बो० ॥
बात कहो तुम्ह आवडें, रूडि रसक वणाइ रे।
हुँकारो देस्युं अम्हें, सांभले लोक घणाइ रे ॥ ७ बो० ॥
हिवें राजा कहें वारता, सांभलज्यो सहु कोई रे।
क्षति प्रतिष्टपुर वर भलो, न्याय चलें सब कोई रे ॥ ८ बो० ॥
श्रीधर सेठ वसें तिहां, कांमदेव तसु पुत्रो रे।
जाण प्रविण सुपुत्र छे, राषण घरनो सूत्रो रे ॥ ९ बो० ॥
परणायो ऊछव करी, चंद्रानयरि भूपें रे।
आंणों करिवा तेहने, आवें तेह सरूपें रे ॥ १० बो० ॥
भोलि बालपणा थकि, करें विलाप विसेषे रे।
कांमदेव ते लाजतो, सासू सुसरा देषे रे ॥ ११ बो० ॥
वलतो ससुरो इम कहे, नान्हड़ी ए बालि रे।
निजि वारे आंणिस्यो, ग्रहणों वींटीं वालि रे ॥ १२ बो० ॥
कामदेव तिमहिज कियो, फिरी २ विचारों रे।
वार २ ते आवतो, लाजे लोक विचारों रे ॥ १३ बो० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोक बोक बांतां करे, त्रीयनी तेहनि आगें रे।
कहें तोमें तेजि नहिं, के पीहर कोइ लागें रे॥ १४ बो० ॥

॥ दूहा ॥

कामदेव मनि दुष धरे, केहनें सूझै पूठि।
रथ सारिथि एकलें, पुछितात चल्यों उठि॥ १॥
मारगि अरधे आवतां, पेष्यों एक प्रसाद।
सुररांणि सचि सगति, बाजें घंट निनाद॥ २॥
आसा पूरण इसरि, अगि सहु आवें जात।
कामदेव देषि प्रसन्न, करें मनस्युं बात॥ ३॥
हिवडां माहिर अस्तरि, बोलावे मुझे सात।
तो माता तो आगलें, कमल चढावुं हाथि॥ ४॥
आरति एहवि आपणि, आयमि उजिऊ ग्यान।
माता आगलि नामऊं, मस्तक पूजा मान॥ ५॥
पुंहतो जाइ सासरि, घणी भगतिइं तिण वार।
सासू सुसरा स्युं मिलि, करें बहुलि मनुहारि॥ ६॥
संतोषि सप्रेडिऊ, चाल्यों त्रिया समेति।
हरषें धरतों हियडो, सफल जांण तो हेत॥ ७॥

अन्त भाग

॥ ढाल १७ मी—राग धन्यासि ॥

इक दिनां राजा सुतो मन्दिरे, चित्ते मन में कुंण रक्षा करें।
माहरे मालवें कवाणदे, हूं ईहां आयो त्रिया परणवे॥
परणवें त्रीयां ईहां आयो, प्रजा माहरि दोहिलि।
हूं वेग जाऊं पंथ दूरें, एह वातां मुझ भलि॥
इम राय मन में करें चिंता, देषि लिलावें कहें।
बैठा उदासि आज प्रिउडा, एम कदि हिं ना रहे॥ १॥
कहो हिव प्रिउडा बात मन तणि, मो हूंति कोई छांनी तुं मृतणि।
वाल्हा जेहवि कहियो मुझ भणि, हुं अरधंगि वाल्हा अति घणि॥
अति घणि वाल्हा दासि ताहरी, कहो गुह्य कृपा करि।
तब कहें राजा मालवानि, राजध्यानी माहरि॥
हुं पम्मार विक्कम नाम माहरो, आयो कारिज ताहरें।
ए राज थाने भला, जाउ वेग मनें माहरें॥ २॥
बोलें बालि लाछि लिलावती, केहि चिंता प्रीउडा एवति।
हिवडां जास्यां थानिक आपणें, राजा विक्रम हरषें अति घणें॥
अति घणे हरषे, विमान उजेणि कुसले गया।
देई बधावे धवल गाई, स सेबल सामेला थया॥
राजा प्रजा सवि आय नमिया, थई महिमा रंगरलि।
लिलावती स्युं राय विक्रम, चिंतवि आस्या फलि॥ ३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कलियुग मांहि विक्रमराय नो, सोहाग सुन्दरि महिमा माजनो।
जेहनि सानिध देव सदा करें, आगलि ऊभा आपद अपहरें॥
अपहरें आपद चरित सुणतां, नामथी नव निध मिलें।
षरतर गछें श्री जिनचंद सगुरू, रूड़े सेवता वंछित फले॥
सतर चउविसे किसन दसमि, आदि आसाढे सहि।
वाचनाचारिज अभसोमे, मतिसुन्दर काजों कहि॥ ४॥

॥ इति श्री विक्रम चौबोलि चउपि सम्पूर्णम् ॥

॥ सकल पंडित प्रवर प्रधान पंडित शिरोरत्न पंडित मुकटामान पंडित श्री५श्री कांतिविजय गणि गुरुभ्यो नमः॥

मिति भद्रं संवत् १७६० वर्षे मृगशिर बदि ६ दिन अर्कवासरे॥ सकल पंडित प्रवर प्रधान पंडित शिरोरत्न पंडित मुकटायमान पंडित श्री५श्री कांतिविजयगणि तत्शिष्य गणि वीरविजय मेघाजि, लिपिकृतं॥ मंगलं लषकानां च पाठनां च मंगलं, मंगलं सर्वलोकानों भूमो भूपति मंगलं॥ १॥

श्रीरस्तु कल्याणमस्तु !!

सज्जन फलज्यों अंब जिम, वड जिम विस्तर ज्यों।
मासे वरसें जो मिलां, तो उण रंगे रहज्यों॥

□□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org